

# 8

## भारतीय संगीत में वाद्य वर्गीकरण



11154CH08



भारतीय संगीत में प्राचीन काल से ही वाद्य यंत्रों की एक समृद्ध परंपरा चली आ रही है। यहाँ वाद्यों का अर्थ उन यंत्रों से है जिनसे ध्वनि उत्पन्न की जाती है। वाद्य शब्द 'वद्' धातु से बना है, जिसका सामान्य अर्थ होता है— बोलना। सांगीतिक ध्वनि तथा गति प्रकट करने के उपकरण को 'वाद्य' कहा जाता है। वाद्यों का उद्देश्य विशिष्ट वस्तु एवं पद्धति से निर्मित, किसी यंत्र पर थाप देकर, फूँककर या तारों में कंपन उत्पन्न करके लयबद्ध तरीके से संगीतमय ध्वनि उत्पन्न करना है। वाद्यों से उत्पन्न ध्वनि विशिष्ट स्वर समुदाय एवं तालों के शास्त्र अनुसार प्रयोग की जाती है। प्रत्येक वाद्य एक विशेष ध्वनि उत्पन्न करता है, जिसमें भावनाओं का अद्भुत संचार होता है। विभिन्न वाद्यों की अपनी विशिष्ट कहानी होती है जो हमारे सांस्कृतिक इतिहास के क्रमिक विकास को दर्शाती है। रसोईघर के बर्तन— तश्तरी, थाली, चिमटे, चम्मच आदि भी संगीतमय संरचना के साथ वाद्यों के रूप में प्रयुक्त होते रहे हैं।

भारतीय संगीतज्ञों ने अनगिनत वाद्य यंत्रों को सँवारा एवं निरंतर प्रयास से लोकप्रिय बनाया है। इन प्रयासों के कारण भारतीय वाद्य यंत्रों ने विश्व भर में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। इनमें से कुछ वाद्य यंत्रों ने नया स्वरूप भी धारण किया है, जैसे— रूद्र वीणा से सुरबहार और फिर सितार।



चित्र 8.1— अवनद्ध वाद्य घटम् बजाते  
हुए विक्रू विनायकराम



चित्र 8.2— घन वाद्य थाली



चित्र 8.3— घन वाद्य हुडक्कु



वाद्यों का प्रयोग विभिन्न युगों में अलग-अलग आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होता रहा है, जैसे— दूर बैठे व्यक्ति को संकेत देने के लिए, जंगली जानवरों को भगाने के लिए, शिकार के समय तथा उत्सव आदि में प्रसन्नता प्रकट करने के लिए वाद्यों का प्रयोग होता था। युद्ध भूमि में सैनिकों का हौसला बढ़ाने के लिए भी दुंदुभि, शंख, ढोल, ताशा आदि वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता था।



चित्र 8.5—प्राचीन कालीन वीणा (तत् वाद्य)



चित्र 8.4—रीड वाद्य

सांगीतिक वाद्यों का उपासना से बहुत गहरा संबंध रहा है इसीलिए मानव मन श्रीकृष्ण को बाँसुरी बजाते हुए, सरस्वती को वीणा, शंकर को डमरू तथा गणेश को मृदंग बजाते हुए ही अपनी कल्पनाओं और उससे निर्मित चित्रों तथा मूर्तियों में देखता है। इसके अलावा, मंदिरों में पूजा-अर्चना के समय घंटा, घंटी, शंख आदि का प्रयोग तथा मांगलिक कार्यों में शहनाई, ढोल, ढोलक, मंजीरा आदि का प्रयोग लोक जीवन में वाद्यों के महत्व को दर्शाते हैं। मानव शरीर को भी वाद्य यंत्र माना गया है तथा इसे 'गात्र वीणा' कहा गया है।

## संगीत में वाद्यों का महत्व



चित्र 8.6—राडोन्ग एवं सिक्किम का ड्रम

कंठ संगीत हो, नृत्य हो या नाटक इन सभी कलाओं की प्रस्तुति में विस्तार के लिए, अपनी कला में आकर्षण पैदा करने के लिए तथा श्रोताओं को प्रभावित करने के लिए वाद्य यंत्रों की सहायता लेनी पड़ती है। साधारण श्रोताओं को भले ही वाद्य पर क्या बज रहा है इसका ज्ञान न हो, परंतु उस संगीत को सुनकर वह आनंद में डूब जाते हैं। गायन तथा अन्य कलाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किए जा रहे भावों की प्रस्तुति में वाद्यों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। जिस भाव और रस को शब्द



चित्र 8.7—हिमाचली शहनाई हेस्सी







और मानव कंठ व्यक्त करते हैं, उसी भाव को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास वाद्यों के द्वारा किया जाता है। वाद्यों के अभाव में संगीत अपूर्ण-सा प्रतीत होता है।

सर्वप्रथम वैदिक काल में हमें सांगीतिक वाद्यों का वर्णन मिलता है, जिससे यह सिद्ध होता है कि उस काल में विभिन्न प्रकार के वाद्यों का विकास हो चुका था। रामायण काल में वीणा और मृदंग द्वारा नृत्य की संगति का उल्लेख प्राप्त होता है तथा महाभारत काल में महती वीणा, वेणु, दुंदुभि, पुष्कर आदि वाद्यों का वर्णन मिलता है।



चित्र 8.8— सितार बजाते हुए कलाकार

1. प्राचीन समय में वाद्य यंत्रों का प्रयोग किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाता था ?
2. सांगीतिक वाद्यों को हम किस तरह पूजा या उपासना से जोड़ते हैं?
3. वैदिक काल, रामायण एवं महाभारत काल में किन वाद्यों का प्रचलन था?



## वाद्य वर्गीकरण

आदिकाल से वर्तमान काल तक मानव विभिन्न प्रकार के सांगीतिक वाद्यों का प्रयोग करता रहा है। इन वाद्यों का उल्लेख संगीत के प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है। भारतीय संगीत में वाद्यों के वर्गीकरण का आधार मुख्यतः ध्वनि रही है। सर्वप्रथम भरत मुनि ने अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में वाद्यों का चतुर्विध वर्गीकरण किया है—

“ततं चैवावनद्धं च घनं सुषिरमेव च  
चतुर्विधं तु विज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितम्॥

नाट्यशास्त्र 28/1

अर्थात् वाद्य चार प्रकार के होते हैं— तत्, अवनद्ध, घन एवं सुषिर।  
उपरोक्त चार प्रकार के वाद्यों के लक्षण स्पष्ट करते हुए भरत मुनि ने लिखा है—

“ततं तन्त्रीगतम् ज्ञेयमवनद्धं तु पौष्करम्।  
घनं तालस्तु विज्ञेयः सुषिरो वंश उच्यते॥”

नाट्यशास्त्र 28/2



अर्थात् तत् तंत्रीवाद्य, पुष्कर अवनद्ध वाद्य, ताल घन वाद्य एवं वंशी सुषिर वाद्य हैं।

प्राचीन, मध्यकालीन तथा वर्तमान काल के अधिकांश संगीतज्ञों एवं संगीत ग्रंथकारों ने भरत के चतुर्विध वर्गीकरण का अनुसरण करते हुए संगीत वाद्यों के चार प्रकार माने हैं—

- |                  |            |
|------------------|------------|
| (1) तत् (तंत्री) | (2) अवनद्ध |
| (3) घन           | (4) सुषिर  |



चित्र 8.9— वीणा

### तत् (तंत्री) वाद्य एवं उसके प्रकार

तत् वाद्य वे वाद्य यंत्र होते हैं जिन पर तार या तंत्री के कंपन से स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। ये कंपन तार पर आघात या घर्षण द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं। तत् श्रेणी के अंतर्गत वे वाद्य आते हैं जिन्हें अँगुलियों, मिजराब या जवा आदि से आघात कर अथवा गज से घर्षण कर बजाते हैं। इसके अंतर्गत तानपुरा, वीणा, सितार, सरोद, वाँयलिन, सारंगी, इसराज आदि वाद्य आते हैं।



चित्र 8.10— तानपुरा

### तानपुरा

तानपुरा एकतारा या दोतारा का विकसित रूप है। इस वाद्य को हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में तानपुरा, तम्बोरा या तमूरा के रूप में जाना जाता है। इसका उपयोग मुख्य रूप से शास्त्रीय संगीतकारों और कुछ स्थानों में लोक कलाकारों द्वारा किया जाता है। इस वाद्य यंत्र के तारों को निरंतर छेड़े जाने पर आधार स्वर (drone/note) की उत्पत्ति होती है। इसी स्वर को आधार मानकर गायक-वादक अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। तानपुरा बनाने के लिए एक कद्दू, जिसे काशीफल या सीताफल भी कहते हैं, को दो हिस्सों में काटा जाता है। सूखे कद्दू के खोल का आधा हिस्सा, एक लकड़ी की प्लेट या तबली से ढका होता है, जिसे 'तुम्बा' के नाम से जाना जाता है। तुम्बा तानपुरे में प्रतिध्वनि या गूँज पैदा करने में सहायक होता है। इसी के आधार पर तानपुरे से गूँज की प्राप्ति होती है जो कि कलाकार की प्रस्तुति में बहुत सहायक होती है। लंबी लकड़ी का एक छोर तुम्बे से जुड़ा होता है। जिस स्थान पर तुम्बा और डाँड़ का नीचे का भाग मिलता है, वह 'गुल' कहलाता है। डाँड़ के ऊपरी हिस्से में छिद्र बने होते हैं जिनमें 'खूँटियाँ' लगी होती हैं। ये खूँटियाँ तानपुरे के ऊपरी भाग में होती हैं। दो खूँटियाँ तानपुरे के सामने के भाग में, एक डाँड़ के बाईं ओर तथा दूसरी दाहिनी ओर होती है। डाँड़ के ऊपर तने चारों तार क्रमशः इन्हीं खूँटियों से बंधे





रहते हैं। खूंटियों तक पहुँचने से पहले तार डाँड़ पर लगी हाथी दाँत की दो पट्टियों से गुज़रते हैं। पहली पट्टी जिस पर तार रखे जाते हैं 'अटी' कहलाती है। दूसरी पट्टी जिसके चार छिद्रों में से तार पिरोए जाते हैं, उसे 'तारगहन' का नाम दिया जाता है। चार तारों में से तीन तार स्टील के व चौथा तार ताँबे का होता है। पुरुषों द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले तानपुरे बड़े और वजन में कुछ भारी होते हैं इसी कारण उनमें प्रयुक्त तार भी कुछ मोटे होते हैं। जिनमें से पहले तार को मंद्र सप्तक के पंचम में, बीच के दोनों तारों (जोड़ी के तार) को मध्य षड्ज में और चौथे तार को मंद्र सप्तक के षड्ज में मिलाया जाता है। पंचम स्वर वर्जित रागों में पंचम वाला तार, मध्यम स्वर में मिलाते हैं। महिलाओं द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले तानपुरे कुछ हल्के होते हैं और उनमें तार भी अपेक्षाकृत पतले होते हैं। इनमें से पहले तार को मध्य सप्तक के पंचम या मध्यम में, जोड़ी के तारों को तार सप्तक के षड्ज में तथा चौथे तार को मध्य सप्तक के षड्ज में मिलाया जाता है। तुम्बे के मध्य तथा तबली के ऊपर लकड़ी या हड्डी की छोटी चौकी लगी होती है जिसे 'ब्रिज', 'घुड़च' अथवा 'घोड़ी' भी कहते हैं। ब्रिज पर फैले होने के कारण, तारों में खिंचाव बना रहता है। घुड़च और लँगोट के बीच में जिन मोतियों में तार पिरोए जाते हैं, उन्हें 'मनका' कहते हैं। मनकों को थोड़ा ऊपर या नीचे करके तारों में स्वरों के सूक्ष्म अंतर को ठीक किया जाता है। ब्रिज के ऊपर तारों के नीचे कुछ धागे दबा दिए जाते हैं, जिन्हें आवश्यकतानुसार आगे-पीछे खिसकाने से तानपुरे से उत्पन्न स्वरों में गुणवत्ता आती है। तानपुरे के तार, तुम्बे के अंत में पाए जाने वाले छिद्रित स्थानों से होकर निकलते हैं। तानपुरे को विभिन्न प्रकार की नक्काशी व जड़ित कार्यों द्वारा एक आकर्षक रूप दिया जाता है। तानपुरे के निर्माण में विभिन्न प्रकार की लकड़ियों का प्रयोग होता है, जिसमें हिंदुस्तानी संगीत में प्रयोग किया जाने वाला तानपुरा प्रायः टुन या टीक की लकड़ी से बना होता है तथा दक्षिण में तानपुरा कटहल (जैकफ्रूट) की लकड़ी से बना होता है।

## सितार

सितार आज का सर्वाधिक लोकप्रिय तंत्री वाद्य है। सितार के नीचे का भाग, जो गोल कद्दू का होता है, 'तुम्बा' कहलाता है। तुम्बे के नीचे के भाग में जिस वस्तु से सितार के तार बाँधे जाते हैं, 'कील' अथवा 'मोंगरा' कहलाता है। तुम्बे का थोड़ा भाग काट कर पतली लकड़ी से ढक दिया जाता है। इस ढक्कन को 'तबली' कहते हैं। तबली के ऊपर लकड़ी या हाथी दाँत की एक चौकी होती है, जिस पर तार रखे जाते हैं इसे 'घुड़च' अथवा 'ब्रिज' कहते हैं। इसकी ऊपरी सतह जवारी कहलाती है। सितार की लंबी खोखली लकड़ी, जिसमें पदे बँधे रहते हैं, 'डाँड़' कहलाती है। यह वह भाग है जहाँ तुम्बी और डाँड़ जुड़ते हैं। सितार के तार को मिलाने के लिए उसमें जो मोती पिरोए जाते हैं, उन्हें 'मनका' कहते हैं। सितार में डाँड़ के ऊपर पीतल अथवा लोहे की सलाइयों के टुकड़े ताँत से बाँध दिये जाते हैं, जिन्हें 'परदा' अथवा 'सुंदरी' कहते हैं। परदे सत्रह से चौबीस तक होते हैं। सितार के ऊपरी सिरे पर हाथी दाँत की दो पट्टियाँ होती हैं। पहली पट्टी जिसके ऊपर तार रखे जाते हैं वह 'अटी' कहलाती है। दूसरी पट्टी जिसके बीच से तार गुज़रता हुआ खूँटी से





चित्र 8.11—सितार बजाते हुए स्व. पंडित देबू चौधरी

बाँध दिया जाता है, 'तारगहन' कहलाता है। सितार के तारों को कसने के लिए डाँड़ में ऊपर तथा दाईं ओर लकड़ी की कुछ चाबियाँ होती हैं, जिन्हें 'खूँटी' कहते हैं। तरबदार सितारों में परदे के नीचे कुछ पतले तार होते हैं, जिसके लिए सितार की डाँड़ में दाईं ओर अलग-अलग छोटी-छोटी खूँटियाँ तथा तबली पर एक छोटा सा घुड़च होता है। इन पतले तारों को 'तरब' कहते हैं। इन तारों से स्वर देर तक गूँजता है। लोहे के तार की बनी हुई वह वस्तु जिसे दाहिने हाथ की तर्जनी में फँसाकर सितार के तारों को आघात करते हैं, 'मिजराब' कहलाती है। तरब के तारों के अतिरिक्त सितार में सात तार होते हैं, जिन्हें विभिन्न स्वरों से मिलाते हैं। सितार का प्रथम तार स्टील का होता है। इसका प्रयोग अन्य तारों की अपेक्षा बहुत अधिक होता है, अतः इसे 'बाज का तार' कहते हैं। दूसरा और तीसरा तार पीतल का होता है जिन्हें मंद्र स से मिलाते हैं, इन्हें 'जोड़ी का तार' कहते हैं। चौथा तार स्टील का होता है जिसे मंद्र प से मिलाते हैं, पाँचवाँ तार पीतल का होता है और इसे मंद्र स स्वर से मिलाते हैं। इसकी मोटाई अन्य तारों की तुलना में अधिक होती है। कुछ सितार वादक चौथे और पाँचवें तार का स्थान एक-दूसरे से आपस में बदल लेते हैं। छठा तार स्टील का होता है जिसे मध्य सा से मिलाया जाता है। इसे 'चिकारी का प्रथम तार' कहते हैं। सातवाँ और अंतिम तार लोहे का होता है। इसे तार सप्तक के स से मिलाते हैं। इसे दूसरी 'चिकारी का तार' कहते हैं। झाला बजाने में चिकारी के तार का विशेष रूप से प्रयोग करते हैं।

## सरोद

सरोद एक फ़ारसी शब्द है जिसका अर्थ है 'गीत' या 'राग'। विदेशी शब्दावली इस वाद्य यंत्र पर विदेशी प्रभाव को प्रकट करती है। सरोद वाद्य की अफगानिस्तान के एक वाद्य 'रबाब' के साथ बहुत समानता है। यह वाद्य भारत के उत्तरी भाग में अत्यंत लोकप्रिय है। डॉ. कासलीवाल के अनुसार, सरोद सेनिया रबाब, अफगानी रबाब और सुरसिंगार के संयोजन का एक परिणाम है। अफगानी और भारतीय संगीत के लक्षणों के मिश्रण ने इस वाद्य को उसके वर्तमान स्वरूप में विकसित किया है। इसके अलावा भारतीय संगीत के दिग्गजों द्वारा बार-बार संशोधन ने इसे एक उत्कृष्ट संरचनात्मक नमूने में विकसित किया है जिससे इसके माधुर्य में निरंतर सुधार आता गया।

सरोद बिना परदे का एक तंत्री वाद्य है और इसे सागवान या तुन की लकड़ी के एक खंड से बनाया जाता है। इसकी लंबाई लगभग 3 से 4 फुट होती है। सरोद में तीन अलग-अलग खंड होते हैं। पहला ऊपरी खंड है, जहाँ तार को बाँधने के लिए खूँटियाँ लगी होती हैं। यह हिस्सा ठोस होता







है। ऊपर की ओर बढ़ने पर यह वाद्य यंत्र पतला होता जाता है। दूसरा मध्य खंड है, जो स्टील की प्लेट से ढका होता है। यह वह भाग है जिस पर तारों को उस धातु की प्लेट में दबाते हुए बायाँ हाथ चलाया जाता है। सरोद का तीसरा खंड खोखला होता है जिसे 'तुम्बी' कहते हैं। यह आकार में गोल तथा बकरे की त्वचा की झिल्ली से ढका हुआ होता है। इस बकरे की खाल वाले भाग के मध्य ही 'घोड़ी' या 'ब्रिज' लगी होती है। सरोद में आठ मुख्य तार होते हैं जो ब्रिज के ऊपर से होते हुए वाद्य-यंत्र के दूसरे छोर पर लगी खूंटियों में बँधे होते हैं। ब्रिज में एक छिद्रित भाग होता



चित्र 8.12— सरोद

है जिसके माध्यम से ग्यारह से पंद्रह तार पिरोए जाते हैं, जो सरोद के मध्य भाग के दाईं ओर लगी खूंटियों से जुड़े होते हैं। इस वाद्य को बजाने के लिए एक हाथ की तर्जनी और मध्य अँगुलियों से स्टील की प्लेट को ढकते हुए अलग-अलग तारों को दबाकर बजाया जाता है। दूसरे हाथ से एक त्रिकोणीय आकार के 'जवा' नामक टुकड़े से तारों को छेड़ा जाता है। जवा नारियल के बाहरी ठोस भाग (खोल) से बना हुआ एक टुकड़ा होता है। इस वाद्य की बनावट में भिन्नता पाई जाती है क्योंकि कलाकार अपने वादन और सुविधा के अनुसार सरोद बनवाते हैं।

भारत में उत्कृष्ट सरोद वादक हुए हैं जिन्हें उत्तरी और पूर्वी क्षेत्रों में नवाबों और महाराजाओं से संरक्षण प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिनमें नियामतुल्लाह खाँ, करामतुल्लाह खाँ (कोलकाता) के नाम उल्लेखनीय हैं। असदुल्ला खाँ (कोलकाता), गुलाम अली, हाफिज़ अली खाँ, बाबा अलाउद्दीन खाँ आदि ने अपने बलबूते पर सरोद वादन के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की। वर्तमान में उस्ताद आशीश अली खाँ, उस्ताद अमज़द अली, आदि सरोद के उत्कृष्ट कलाकार हैं।

स्वर्गीय अलाउद्दीन खाँ, स्वर्गीय हाफिज़ अली खाँ, उस्ताद अली अकबर खाँ, स्वर्गीय राधिका मोहन मोइत्रा, और स्वर्गीय शरण रानी बाकलीवाल ने सरोद वादन की कला को नई ऊँचाइयाँ दी हैं।





चित्र 8.13—वॉयलिन बजाते हुए कलाकार

## वॉयलिन

भारत के प्राचीन शिल्पों में वॉयलिन के समान वाद्य का चित्रांकन एक प्रमाण है कि वॉयलिन का निर्माण प्रायः 'रावणहत्था' सहित भारत में प्रचलित अन्य वीणाओं से प्रेरित होकर हुआ होगा। यह भी एक तथ्य है कि रावणहत्था और वॉयलिन की वादन शैली में काफी समानताएँ हैं। वॉयलिन वॉयला परिवार से है जो कि वॉयलिन का बड़ा आकार है। वॉयलिन के आविष्कार संबंधी कोई सर्वसम्मत जानकारी तो नहीं है पर बताया जाता है कि वॉयलिन भारत में अंग्रेजों के साथ 18वीं शताब्दी में आया। सारंगी, दिलरुबा, इसराज जैसे गज वाद्यों का प्रचलन भारत में पहले से ही था इसलिए संगीतकारों को वॉयलिन बजाने में कोई समस्या नहीं आई। हालाँकि भारतीय संगीतकारों ने इसे भारतीय अंदाज़ में बजाया। भारतीय वॉयलिन वादकों ने इसमें कुछ तकनीकी बदलाव किए जैसे इसके तारों की संख्या, पकड़ने का तरीका आदि। दक्षिण भारत में वॉयलिन का प्रयोग सर्वप्रथम हुआ। इसके बाद इसे

उत्तर भारतीय संगीत में भी सम्मिलित किया गया। उत्तर में स्वर्गीय पंडित वी.जी. जोग और विदुषी एन. राजम तथा दक्षिण में डॉ. एल. सुब्रमनियम, एम.एस. गोपालकृष्णन, टी.एन. कृष्णन और लालगुड़ी जयरामन् वॉयलिन के प्रख्यात वादक हुए। भारत में वॉयलिन संगत एवं स्वतंत्र दोनों शैलियों में बजाया जाता है। दक्षिण भारतीय संगीत में वॉयलिन का प्रयोग एकल वादन के साथ-साथ मुख्यतः संगत वाद्य के रूप में होता है लेकिन उत्तर भारत में वॉयलिन एकल वादन और संगीत दोनों के लिए लोकप्रिय है।

## इसराज



चित्र 8.14—इसराज

इसराज एक अनूठा वाद्य यंत्र है जिसमें सितार और सारंगी की संयुक्त विशेषताएँ हैं अतः इसराज एक प्रकार से इन दोनों वाद्यों का ही रूपांतर है। इसराज का संगत वाद्य के रूप में ज्यादा प्रयोग किया जाता है। प्रोफ़ेसर लाल मणि मिश्रा के अनुसार सारंगी बजाना मुश्किल था और इसलिए नवगीत संगीतकारों के साथ समाज की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए परदे और बो की सहायता से बजने वाला वाद्य यंत्र प्रचलित हो गया। इसराज के साउंड बॉक्स के बीच में एक ब्रिज होता है जो सारंगी की तरह पतला होता है। मुख्य तार, जिनकी संख्या चार से छह है, इसी ब्रिज से गुजरते हैं। सहायक तार, जिनकी संख्या पंद्रह है, ब्रिज के छिद्रों से होकर







गुजरते हैं। इसराज पर धातु से बने सत्रह से उन्नीस परदे होते हैं जिन्हें डाँड़ पर राग के स्वरों के अनुसार स्थानांतरित किया जा सकता है। सहायक तारों से जुड़ी हुई खूँटी को लगाने के लिए एक अतिरिक्त लकड़ी की पट्टी फिंगरबोर्ड की तरफ़ लगायी जाती है।

लोक, सुगम और फिल्म संगीत में भी इस वाद्य का अत्यंत प्रयोग होता है। बंगाल में यह वाद्य अधिक लोकप्रिय है। इस वाद्य यंत्र का प्रयोग अधिकतर रबीन्द्र संगीत और शास्त्रीय संगीत की संगत के लिए किया जाता है तथा इसराज की संगति के बिना रबीन्द्र संगीत को अधूरा माना जाता है। कुछ संगीतकारों ने इसे एकल वाद्य यंत्र के रूप में भी प्रयोग किया है, जैसे— स्वर्गीय रणधीर रॉय, औशोश बंधोपाध्याय निर्मल नंदी, बुद्ध देव दास, आदि। विश्व भारती शांतिनिकेतन में इसराज का विभाग बना है जहाँ आगे आने वाली पीढ़ी इसे सीख सके एवं उपाधि भी प्राप्त कर सके।

## गिटार

गिटार का प्रवेश भारतीय सांगीतिक परिवेश में अनुमानतः वर्ष 1925 में हुआ। यह स्वतंत्र वादन तथा गायन के साथ संगत के लिए उपयुक्त होने वाला वाद्य है। गिटार मूलतः पाश्चात्य वाद्य है। लेकिन भारत के विभिन्न संगीतकारों ने इसकी बनावट, प्रयोग किए जाने वाले तारों की संख्या और वादन शैली में परिवर्तन करके इसे भारतीय संगीत में प्रयुक्त होने वाला वाद्य बना दिया है। पूरब तथा पश्चिम के सहयोग से जिन वाद्यों का निर्माण हुआ उनमें से एक गिटार है। विगत कुछ वर्षों से यह भारतीय संगीत में स्थान प्राप्त कर चुका है। यह वाद्य 12 ई. से ही स्पेन में पाया जाता है। इसका आकार भी आधुनिक गिटार से बहुत अधिक मिलता-जुलता है। इसे बजाने के लिए कोण या मिजराब का प्रयोग किया जाता है। अमेरिका में इसका एक नया प्रकार निकला है, जिसको इलेक्ट्रिक गिटार कहते हैं। पाश्चात्य संगीत में गिटार खड़े होकर या कुर्सी पर बैठकर बजाते हैं। भारतीय शैली में इसे आलथी-पालथी मारकर गोद में रखकर बजाया जाता है। भारतीय संगीतकारों ने हवाईन गिटार में तरब एवं चिकारी के तारों तथा तुम्बा को जोड़कर इसे पूरी तरह भारतीय बना दिया है। पाश्चात्य गिटार के हवाईन और स्पैनिश नामक दो अलग प्रकार होते हैं। स्पैनिश गिटार रिदम और कॉर्ड बजाने के लिए प्रयुक्त होता है, जबकि हवाईन गिटार में सुरों और गीतों का वादन होता है। इसे रॉड और मिजराब के माध्यम से बजाते हैं। भारतीय संगीतकारों ने अपने प्रयोग हवाईन गिटार में ही किए हैं। इसमें पहला नाम ब्रज भूषण काबरा का लिया जाता है। भारतीय संगीतकारों ने चूँकि गिटार को अपने-अपने ढंग से बजाया है इसलिए उन्होंने इसे अपना-अपना नाम भी दे दिया। पंडित विश्व मोहन भट्ट इसे 'मोहन वीणा' और 'विश्व वीणा' के नाम से बजाते



चित्र 8.15— गिटार बजाते हुए कलाकार दीप



हैं तो उनके पुत्र सलिल भट्ट इसे 'सात्विक वीणा' के नाम से बजाते हैं। वरुण कुमार पाल ने इसे 'हंस वीणा' का, रवि किरण ने 'नवचित्र वीणा' का तो कमला शंकर ने 'शंकर वीणा' का नाम दिया। श्रीकृष्ण शर्मा और देवाशीष मुखर्जी भी गिटार के अच्छे कलाकार हैं। गिटार में स्वर्गीय नलिन मजूमदार का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 50-60 के दशकों में इनके प्रयास से उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद् इलाहाबाद के पाठ्यक्रम में इसका प्रवेश हुआ। प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद द्वारा आयोजित संगीत प्रतियोगिता में गिटार को भी सम्मिलित किया गया। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन सहित शिक्षण संस्थाओं में भी गिटार का सम्मिलित होना एक शुभ संकेत है। आजकल गिटार वाद्य का प्रचलन चित्रपट जगत के साथ शास्त्रीय संगीत में भी अधिक है। अब गिटार यंत्र अनेक विश्वविद्यालयों में सिखाया जा रहा है, जैसे— दिल्ली विश्वविद्यालय।



1. जिन तंत्री वाद्यों के बारे में आपने अब तक पढ़ा है क्या अपने आसपास उन वाद्यों को कभी देखा है तो उन्हें देखकर चित्र बनाइए अन्यथा इस पुस्तक में दिए गए चित्रों के अनुसार रेखाचित्र बनाइए।

## अवनद्ध वाद्य एवं उसके प्रकार

अवनद्ध संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है— मढ़ा हुआ, लपेटा हुआ या चारों तरफ से कसा हुआ। वे वाद्य यंत्र जो अंदर से खोखले होते हैं, जिनके मुख पर चमड़ा मढ़ा होता है तथा जिन पर हाथ से या डंडी से आघात करके ध्वनि निकाली जाती है, 'अवनद्ध वाद्य' कहलाते हैं। अवनद्ध वाद्य मूलतः मिट्टी, लकड़ी या धातु के बने होते हैं। प्राचीन काल में मिट्टी या मृदा से बनाए जाने के कारण इन्हें साधारणतः 'मृदंग' ही कहते थे।

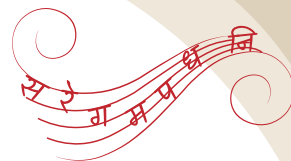
प्राचीन काल में निम्नलिखित अवनद्ध वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है— भूमिदुंदुभि, दुंदुभि, पुष्कर, मृदंग, पटह, हुडुक्का, नगाड़ा आदि। वर्तमान में तबला, पखावज, मृदंगम्, कंजीरा, तविल, ढोलक, नाल, डफ, दुक्कड़, ढोल, खोल और पुंग आदि अनेक वाद्यों का प्रयोग हो रहा है।

ताल संगीत का प्राण है और अवनद्ध वाद्य ताल-ठेकों को धारण करते हैं। आज हम अवनद्ध वाद्य के बिना संगीत की कल्पना भी नहीं कर सकते। अवनद्ध वाद्यों की संगति से संगीत लयबद्ध, तालबद्ध, मधुर और मनोरंजक हो जाता है। लगभग सभी अवनद्ध वाद्यों का विकास गायन, वादन और नृत्य की संगति करने के उद्देश्य से हुआ है। लेकिन वर्तमान में तबला और पखावज जैसे वाद्यों ने अपने नाद सौंदर्य और नाद वैचित्र्य के गुणों के कारण संगीत में अपना एक स्वतंत्र स्थान बना लिया है। आज संगीत समारोहों में तबला और पखावज का एकल वादन श्रोताओं के लिए आकर्षण का केंद्र होता है।

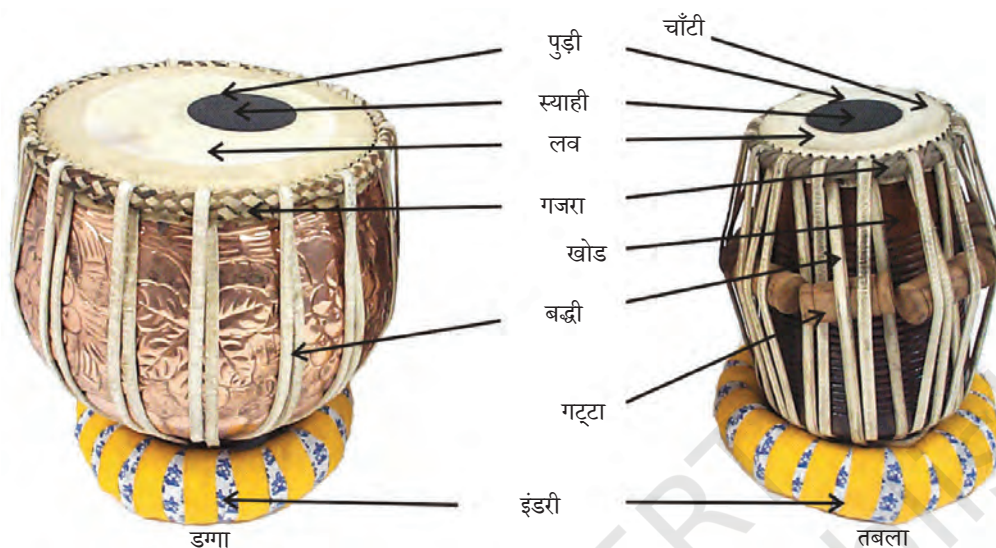
इसके अतिरिक्त सामाजिक जीवन में भी अवनद्ध वाद्यों का अपना महत्व है। विभिन्न मांगलिक अवसरों यथा विवाह आदि में दुक्कड़, ढोल, ताशा जैसे अवनद्ध वाद्यों का वादन होता है। विभिन्न प्रकार के धार्मिक कार्यों में भी अवनद्ध वाद्यों का खूब प्रयोग होता है। मंदिरों में आरती के समय, संकीर्तन मंडलियों में, रथ यात्रा आदि में भी विभिन्न प्रकार के अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग







होता है। युद्ध में सैनिकों में जोश भरने के लिए और उन्हें युद्ध के लिए प्रेरित करने हेतु ढोल और नगाड़े जैसे बड़े-बड़े अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग होता था। स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस पर सैनिकों की परेड के समय भी अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग किया जाता है।



चित्र 8.16 — डग्गा एवं तबला

अब हम वर्तमान काल में प्रचलित कुछ प्रमुख अवनद्ध वाद्यों की चर्चा करेंगे—

- |          |           |             |                 |
|----------|-----------|-------------|-----------------|
| (1) तबला | (2) पखावज | (3) मृदंगम् | (4) तविल (थविल) |
| (5) ढोलक | (6) खोल   | (7) बाँगो   | (8) कौंगो       |

### तबला

तबला उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रमुख अवनद्ध वाद्य है। इसका प्रयोग संगीत में गति या लय के मापन के लिए किया जाता है। शास्त्रीय, उपशास्त्रीय व सुगम संगीत के अतिरिक्त विभिन्न वाद्यों व कथक नृत्य में संगति के लिए तबला वाद्य का प्रयोग किया जाता है। अपने नाद सौंदर्य एवं नाद विविधता के गुणों के कारण तबला वाद्य को संगीत के विश्व मंच पर महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। आज संगीत जगत में तबला वाद्य, संगति वाद्य के अतिरिक्त, एकल वादन के लिए भी प्रमुखता से जाना जाता है। संगीत सम्मेलनों में गायन, वादन व नृत्य के साथ तबला वाद्य को एकल वादन के कार्यक्रमों में भी प्रमुखता से स्थान दिया जाता है। इससे कार्यक्रम में आकर्षण बढ़ जाता है।

तबला एक ऊर्ध्वमुखी वाद्य है, जिसके मुख्य रूप से दो अंग होते हैं— दायँ और बायाँ। साधारणतः जिसे दाहिने हाथ से बजाते हैं, उसे तबला और जिसे बाएँ हाथ से बजाते हैं, उसे 'बायाँ' या 'डग्गा' कहते हैं। तबला लकड़ी का बना होता है। इसके निर्माण में साधारणतः शीशम,



नीम और बीजासार की लकड़ी का प्रयोग होता है। तबले की लकड़ी अंदर से तीन हिस्से खोखली और एक हिस्सा ठोस होती है। ठोस वाला हिस्सा नीचे की तरफ होता है, जिससे बजाते समय तबला अनावश्यक हिलता नहीं है। बायाँ या डग्गा पीतल, ताँबा या मिट्टी का बना होता है। मिट्टी के डग्गे के टूटने की संभावना अधिक रहती है, इसलिए आजकल पीतल या ताँबे के डग्गे का प्रयोग अधिक प्रचलित है। लेकिन मिट्टी के डग्गे की आवाज़ सबसे अच्छी मानी जाती है। डग्गे का मुख दाएँ तबले के मुख की तुलना में बड़ा होता है। तबला वाद्य के प्रमुख अंगों का वर्णन निम्नलिखित है—

- पुड़ी** तबले के दोनों मुखों (तबला और डग्गा) पर बकरे की खाल मढ़ी होती है जिसे ‘पुड़ी’ कहते हैं। पुड़ी के मुख्य तीन भाग होते हैं— किनार या चाँटी, लव और स्याही। तबले की पुड़ी डग्गे की तुलना में पतली होती है, क्योंकि तबले को ऊँचे स्वर में तथा डग्गे को नीचे स्वर में मिलाया जाता है।
- चाँटी** पुड़ी के किनारे, मुख्य पुड़ी के अतिरिक्त चमड़े की एक पट्टी होती है, जिसे ‘चाँटी’ या ‘किनार’ कहते हैं। दाएँ तबले की चाँटी पर तबले के वर्ण— ‘ता’ या ‘ना’ बजाए जाते हैं।
- लव** पुड़ी पर चाँटी और स्याही के बीच के स्थान को ‘लव’ या ‘मैदान’ कहते हैं। तबले में लव पर ‘ता’ और ‘तिं’ वर्ण तथा डग्गे में ‘गे’ और ‘घे’ वर्ण बजाए जाते हैं।
- स्याही** पुड़ी के बीच में काले रंग की गोलकार आकृति को ‘स्याही’ कहते हैं। इसे लोहे के चूर्ण (राख) में लेई मिलाकर तैयार किया जाता है। स्याही को दाएँ तबले की पुड़ी के बीच में लगाते हैं, जबकि डग्गे में कलाई को रखकर बजाने की प्रक्रिया के कारण इसे बीच में न लगाकर, एक ओर, चाँटी की तरफ़ थोड़ा खिसकाकर लगाते हैं।
- गजरा** तबले के मुख पर पुड़ी को कसने के लिए चमड़े की तीन पतली बद्धियों को आपस में गुँथकर कसा जाता है। इन आपस में गुँथी हुई माला सादृश बद्धियों को ‘गजरा’ कहते हैं जिसके लिए गजरे में 16 छिद्र किए जाते हैं, इन्हें ‘घर’ कहते हैं। तबला मिलाते समय गजरे पर आघात करके भी स्वर को ऊँचा या नीचा किया जाता है।
- गट्टा** ये लकड़ी के टुकड़ों से निर्मित बेलनाकार और लगभग तीन इंच लंबाई के होते हैं। इन गट्टों का प्रयोग दाहिने तबले में किया जाता है। तबले के ऊपर कसी बद्धियों और तबले के खोड़ के बीच इन लकड़ी के गट्टों को फँसाकर रखा जाता है। इन गट्टों पर हथौड़ी से आघात करके नीचे खिसकाने से तबले के स्वर को आवश्यकतानुसार ऊँचा तथा आघात करके ऊपर खिसकाने से स्वर को आवश्यकतानुसार नीचा किया जा सकता है।
- बद्धी** यह चमड़े की डोर या पट्टी होती है। यह गजरे में किए गए छिद्रों से होती हुई, लकड़ी के गट्टों को दबाती हुई, लकड़ी के नीचे वाली इंडरी से होती हुई पुड़ी को कसती







है। डगों में भी इसी चमड़े की बद्धी का प्रयोग किया जाता है, यद्यपि पूर्व में मजबूत डोरी का प्रयोग किया जाता था, किंतु अब चमड़े से बनी बद्धी का ही प्रयोग दिखाई देता है।

**इंडरी या गुडरी (रिंग)** यह कपड़े, नारियल की डोरी, मूँज आदि से बनी गोल आकृति की होती है, जिस गुडरी (रिंग) पर तबला और डग्गा रखकर वादन किया जाता है। इससे तबला वादन करते समय हिलता नहीं है और तबले तथा विशेषतः डगों की गूँज भी बढ़ जाती है।

## पखावज

पखावज उत्तर भारतीय संगीत के प्रमुख अवनद्ध वाद्यों में से एक है। ध्रुपद व धमार गायकी में संगति के लिए इसका प्रयोग होता है। संगति के अलावा इसमें एकल वादन भी खूब पसंद किया जाता है।

पखावज दोमुखी वाद्य है जिसे लिटाकर बजाया जाता है। शीशम, बीजा या आम की लकड़ी से इसका मूल भाग बनाया जाता है। इसकी लंबाई लगभग 75 से 80 सेंटीमीटर होती है। इसका दायाँ मुख छोटा तथा बायाँ मुख बड़ा होता है। इसके दाएँ मुख का व्यास लगभग 16 से 18 सेंटीमीटर तथा बाएँ मुख का व्यास लगभग 24 से 25 सेंटीमीटर होता है। पखावज के दोनों मुखों का व्यास इसकी लंबाई के अनुपात के हिसाब से घट या बढ़ सकता है। इसके बाएँ मुख पर गीला आटा लगाकर बजाते हैं, जिस कारण इसका स्वर नीचा और गंभीर होता है। जबकि दाएँ मुख पर स्याही का लेप लगा होता है और इसे बाएँ की तुलना में ऊँचे स्वर में रखते हैं, जिसे आवश्यकतानुसार किसी भी स्वर में मिला लेते हैं।

पखावज के दोनों मुखों पर चमड़े की पुड़ी लगी होती है जो गजरे के साथ बद्धियों द्वारा आपस में कसी जाती है। इसकी पुड़ी में बकरे के चमड़े का प्रयोग किया जाता है और बद्धियाँ भैंस या ऊँट के चमड़े से बनाई जाती हैं। पखावज को आवश्यकतानुसार स्वर में मिलाने के लिए इसके गजरे पर 16 घर होते हैं। इनकी सहायता से स्वर को चढ़ाकर या उतारकर वाद्य को मिलाने में मदद करते हैं। इसकी बद्धियों में लकड़ी के आठ गट्टे फँसे होते हैं जो वाद्य को मिलाने में मदद करते हैं। स्याही और चाँटी के बीच जो खुला स्थान रहता है, उसे 'लव' या 'मैदान' कहते हैं। पखावज की ध्वनि अधिक जोरदार, गूँजमय और आँसदार होती है। दक्षिण के मृदंगम् और उत्तर के पखावज में सबसे बड़ा अंतर इसके आकार का होता है। पखावज वाद्य मृदंगम् से बड़ा होता है। पखावज में मुख्य रूप से चौताल, धमार, सूलताल, आदिताल, तीव्रा, बसंत, लक्ष्मी आदि तालों का प्रयोग किया जाता है।



चित्र 8.17— पखावज



## मृदंगम्

मृदंगम् दक्षिण भारतीय संगीत का प्रमुख अवनद्ध वाद्य है। इसका प्रयोग गायन-वादन तथा नृत्य की संगति के लिए होता है। एक अवनद्ध वाद्य के रूप में यह वाद्य इतना महत्वपूर्ण है कि इसके बिना कर्नाटक के संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

यह दोमुखी वाद्य है जिसे लिटाकर बजाया जाता है। इसे बनाने के लिए मुख्यतः कटहल की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। इसका दायाँ मुख इसके बाएँ मुख की तुलना में थोड़ा छोटा होता है। मृदंगम् की लंबाई 22 से 24 इंच तक और इसके मध्य के घेरे का व्यास 12 इंच तक होता है। कर्नाटक संगीत में प्रयुक्त होने वाला मृदंगम् आकार-प्रकार में लगभग उत्तर भारतीय पखावज की तरह ही दिखता है। हालाँकि इसकी संरचना तथा नाद में भिन्नता होती है। मृदंगम् की लंबाई पखावज की तुलना में कम होती है। इसके दाएँ मुख में लगने वाला चमड़ा पखावज में लगने वाले

चमड़े की तुलना में अधिक मोटा होता है। मृदंगम् के दाएँ मुख के किनारे का यह चमड़ा स्याही के स्थान को छोड़कर पुड़ी के पूरे हिस्से को घेरे रहता है। इस कारण मृदंगम् में चाँट और स्याही का भाग ही दिखाई देता है, जबकि पखावज की पुड़ी, चाँट, लव और स्याही इन तीन भागों में बँटी होती है। दक्षिण भारत में इस स्याही को 'सोरू' कहते हैं। इसे लौह चूर्ण, पके चावल आदि के मिश्रण से बनाते हैं। मृदंगम् का बायाँ मुख भी पखावज की तुलना में छोटा होता है, जिस पर सूजी की पूलिका लगाई जाती है। मृदंगम् के बाएँ मुख पर सूजी लगाने का स्थान छोटा रखा जाता है। मृदंगम् में दोनों मुखों की पुड़ियों को चमड़े की बद्धी से आपस में कसा जाता है, जिसे 'चटाई' या 'पिन्नल' कहते हैं। इसका दायाँ मुख ही मुख्य गायक या वादक के गाए जाने वाले स्वर में मिलाया जाता है।



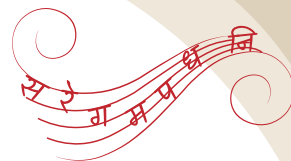
चित्र 8.18— मृदंगम् बजाते हुए कलाकार

## थविल

थविल दक्षिण भारत के केरल राज्य का एक प्रमुख अवनद्ध वाद्य है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से वहाँ के लोक संगीत, कर्नाटक शास्त्रीय संगीत एवं नागस्वरम् की संगति के लिए किया जाता है। थविल का ढाँचा लकड़ी का बना होता है। इसके निर्माण में मुख्यतः पनस (कटहल) की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। इसके ढाँचे की लंबाई लगभग 18 इंच होती है। ढाँचे का मध्य भाग कुछ उभरा हुआ होता है तथा थविल के दो मुख होते हैं। दाहिने मुख का व्यास बाएँ मुख के व्यास से अधिक होता है। इसके दाहिने मुख का व्यास लगभग 10 इंच एवं बाएँ मुख का व्यास लगभग आठ इंच होता है। कहीं-कहीं दोनों मुखों का व्यास एकसमान आठ-आठ इंच का भी होता है।







इसके मुखों पर चमड़े की इकहरी परत का प्रयोग किया जाता है। दाहिने मुख पर गाय या भैंस का चमड़ा एवं बाएँ मुख पर बकरे के चमड़े का प्रयोग किया जाता है। दाहिने मुख के चमड़े को अधिक कसा जाता है, जबकि बाएँ मुख के चमड़े को थोड़ा ढीला रखते हैं और भीतर की ओर से लेप लगाया जाता है। दोनों मुखों को ढाँचे पर मढ़ने के लिए छह से सात बाँस की पतली पट्टियों तथा जूट व चमड़े से निर्मित गोलाकार चक्र का उपयोग किया जाता है। वर्तमान में लोहे के खोखले रिंग का भी प्रयोग देखने को मिलता है। दोनों मुखों के चमड़ों को इन गोल चक्रों की सहायता से ढाँचे पर लगा देते हैं और भैंस के चमड़े की मोटी बद्धी द्वारा मज़बूती से कस देते हैं। इसकी बद्धियों को कसने के लिए मध्य भाग में चमड़े की चौड़ी बद्धी का प्रयोग किया जाता है। इस वाद्य को किसी विशेष स्वर में मिलाने की सुविधा नहीं होती। इसकी आवाज़ बहुत तीव्र होती है।



चित्र 8.19— थविल बजाते हुए कलाकार

## ढोलक

ढोलक उत्तर भारतीय संगीत में प्रचलित एक प्रमुख लोक अवनद्ध वाद्य है। इसका प्रयोग लोक संगीत में गायन की संगति के लिए किया जाता है। इसके दो मुख होते हैं। इसकी लंबाई लगभग 45 सेंटीमीटर और मध्य का व्यास लगभग 27 सेंटीमीटर का होता है। इसका दायाँ मुख बाएँ मुख की तुलना में कुछ छोटा होता है। दोनों मुखों पर चमड़े की पुड़ी लगी होती है। दोनों पुड़ियाँ सूत की डोरी की सहायता से एक-दूसरे से कसी होती हैं। इन बद्धियों के बीच में लोहे के छल्ले लगे होते हैं जिनकी सहायता से ढोलक को कसा जाता है। बाएँ मुख से निकलने वाली ध्वनि को गंभीर करने के लिए इसमें चमड़े की भीतरी सतह पर एक विशेष प्रकार का लेप लगाया जाता है। इसे अँगुलियों से बजाते हैं।

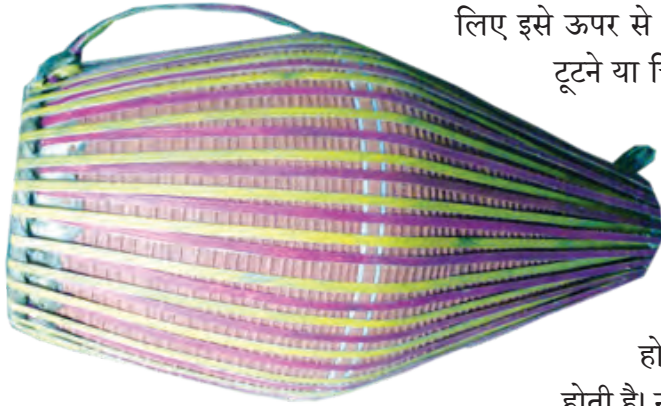


चित्र 8.20— हारमोनियम एवं ढोलक बजाते हुए कलाकार

## खोल

बंगाल, ओडिशा, असम और मणिपुर राज्यों के संगीत में खोल वाद्य प्रचलित है। कीर्तन परंपरा में इसका खूब प्रयोग होता है। इसका ढाँचा पकी हुई मिट्टी से बना होता है। इसके दाएँ मुख का व्यास लगभग 3½ इंच और बाएँ मुख का व्यास लगभग 7½ इंच का होता है। इसके मध्य भाग का व्यास लगभग 10 इंच का होता है। इस वाद्य की लंबाई 24 से 25 इंच तक होती है। मिट्टी का खोल भीतर से खोखला होता है। मिट्टी के खोल की सुरक्षा के





चित्र 8.21—खोल

लिए इसे ऊपर से एक चौड़े कपड़े की पट्टी से लपेट देते हैं, ताकि यह टूटने या चिटकने न पाए। इसके दोनों मुख तबला या मृदंग की भाँति मढ़े जाते हैं जो चमड़े की पट्टी से कसे रहते हैं। इसके बाएँ और दाएँ मुख पर तबले की भाँति लेप लगाया जाता है। लेप चावल की लेई, लौह चूर्ण और गोंद से बनता है। इसका दायाँ मुख ऊँचे स्वर में मिला होता है और बाएँ मुख का नाद गंभीर होता है। दोनों मुखों पर एक लंबी मजबूत रस्सी बँधी होती है। नृत्य आदि के साथ इसे गले में लटका कर, खड़े होकर या बैठकर बजाया जाता है।

### बौंगो

बौंगो और कौंगो मूलतः अफ्रीकी वाद्य हैं। इनका प्रयोग अधिकतर भारतीय फ़िल्म संगीत में किया जाता है। बौंगो एक छोटा-सा अवनद्ध वाद्य है। इसमें तबला वाद्य के समान दायाँ और बायाँ दो भाग होते हैं जो आपस में एक-दूसरे से जुड़े होते हैं। इसका बायाँ मुख बड़ा और दायाँ मुख छोटा होता है। छोटे मुख पर पतली तथा बड़े मुख पर मोटे चमड़े की पुड़ी चढ़ाई जाती है। पुड़ी के किनारे को स्टील के रिंग में फँसाकर मुख पर कस दिया जाता है। रिंग के किनारों पर चार दिशाओं में चार स्टील की छड़ें फँसी होती हैं जो नीचे की तरफ पेंच द्वारा कसी जाती हैं। इन पेंचों की मदद से पुड़ी को ऊँचे या नीचे स्वर में मिलाया जा सकता है। बौंगो अधिकतर कुर्सी या स्टूल पर बैठकर बजाया जाता है। बजाते समय इसे दोनों घुटनों के बीच आगे की तरफ झुकाकर फँसा लेते हैं जिससे बजाने में सुविधा रहती है। ऊँची ध्वनि निकालने के लिए एक अँगुली का तथा नीची ध्वनि निकालने के लिए तीन या चार अँगुलियों को जोड़कर थाप जैसे आघात का प्रयोग किया जाता है। बौंगो के दोनों भागों में किसी भी एक भाग पर दोनों हाथों की अँगुलियों का प्रयोग वादन के लिए किया जा सकता है।



चित्र 8.22—बौंगो







## कौंगो

कौंगो वाद्य बौंगो से आकार में काफी बड़ा होता है। कौंगो के तीन भाग होते हैं। ये तीनों भाग क्रम से, बड़े, मध्यम और छोटे आकार के होते हैं। प्रत्येक भाग की ऊँचाई बराबर होती है, लेकिन बौंगो की तुलना में अधिक होती है। तीनों भागों के मुखों के व्यास क्रमशः बड़े, मध्यम और छोटे होते हैं। इन तीनों मुखों पर क्रमशः मोटी, मध्यम और पतले चमड़े की पुड़ी चढ़ाई जाती है। बौंगो के समान ही पुड़ी को स्टील की रिंग में फँसाकर इसके मुख पर लगाया जाता है। रिंग के किनारों पर चार दिशाओं में चार स्टील की छड़ें फँसी होती हैं जो नीचे की तरफ़ पेंच द्वारा कसी जाती हैं। कौंगो को सुविधानुसार अलग-अलग स्वरों में मिलाया जा सकता है। कौंगो के तीनों भाग आपस में जुड़े होते हैं। इन्हें खड़ा करने के लिए नीचे स्टैंड लगा होता है। इसे खड़े होकर बजाया जाता है।



चित्र 8.23— कौंगो

## घन वाद्य

घन वाद्य मूलतः लकड़ी, काँसा, पीतल आदि धातु के बने हुए होते हैं, जिन्हें आपस में टकराकर या डंडियों के प्रहार से बजाते हैं। इनका मुख्य कार्य लय धारण करना होता है। लोक संगीत में इनका प्रयोग अधिक होता है। इसके अंतर्गत आने वाले वाद्य हैं— घंटा, घंटी, झाँझ, करताल, मंजीरा, घुँघरू, मुरचंग आदि।



चित्र 8.24— करताल



चित्र 8.25— खंजरी



चित्र 8.26— घुँघरू व घंटी

## सुषिर वाद्य एवं उसके प्रकार

सुषिर वाद्यों के अंतर्गत वे वाद्य आते हैं जिनमें स्वरों की उत्पत्ति वायु के कंपन द्वारा होती है। इन वाद्यों में हवा भरकर या फूँककर स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। इन वाद्यों में वायु के दबाव को ही



घटा-बढ़ाकर स्वर ऊँचा-नीचा किया जाता है। इसके अंतर्गत बाँसुरी, शहनाई, शंख, नागस्वरम्, क्लेरोनेट, सैक्सोफ़ोन, हारमोनियम, ऑर्गन, माउथ ऑर्गन, एकोर्डियन आदि वाद्य आते हैं।



चित्र 8.27— सुषिर वाद्य— बाँसुरी बजाते हुए कलाकार

### बाँसुरी

बाँसुरी दुनिया का सर्वाधिक लोकप्रिय वाद्य है। देश-विदेश के प्रतिष्ठित मंचों से लेकर गाँव आदि में उत्सवों व मेलों में बाँसुरी की धुन सुनने को मिल जाती है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग रूपों एवं आकार-प्रकार के कारण बाँसुरी— वंशी, वंसी, मुरली, वेणु, पावा, पावरी, अलगुज एवं कोलकु आदि नामों से भी जानी जाती है। प्राचीन काल में यह मुख वीणा नाम से भी जानी जाती थी। भारत में बाँसुरी बाँस से बनती है जबकि विदेशों में इसका निर्माण अलग-अलग धातुओं से होता है। बाँस की बनी भारतीय बाँसुरी पूरी तरह नैसर्गिक साज है। इसमें छह अथवा सात छिद्र होते हैं। इसे फूँककर बजाया जाता है और अँगुलियों से उन छिद्रों को ढककर अथवा खोलकर स्वरों को बजाया जाता है।

भारतीय संगीत परंपरा में बाँसुरी अत्यंत प्राचीन काल से ही प्रचलित रही है। ऋचा के गायन के समय बाँसुरी सर्वाधिक प्रमुख संगत वाद्य मानी जाती थी। आज यह शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम, लोक एवं फिल्म संगीत का अभिन्न अंग बन चुकी है। बाँसुरी को पूरे भारत में विभिन्न नामों से जाना जाता है—



चित्र 8.28— बाँसुरी के विभिन्न प्रकार

कोलवी— कन्नड़

उडल/बाँसुरी— मध्य प्रदेश व छत्तीसगढ़

कुली/बाँसुरी— नागालैंड

वंशी— पश्चिम बंगाल

वेनो, वंशी, वेणु और मुरली— गुजरात

भारत में उत्तर एवं दक्षिण भारतीय संगीत में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। पाश्चात्य संगीत में भी इसका खूब प्रयोग होता है। पन्नालाल घोष, विजय राघव राव, रघुनाथ सेठ, हरिप्रसाद चौरसिया, रोनू मजुमदार और सिक्किल सिस्टर्स आदि बाँसुरी के ख्याति प्राप्त कलाकार हुए हैं। विभिन्न प्रकार की बाँसुरियों को भिन्न-भिन्न प्रकार से बजाया जाता है। दिए गए चित्र से विद्यार्थी इसे आसानी से समझ सकेंगे।







## हारमोनियम

हारमोनियम संभवतः भारत में सबसे अधिक प्रयोग किये जाने वाले वाद्ययंत्रों में से एक है। यह क्षेत्रीय, फिल्म, प्रकाश और शास्त्रीय संगीत का हिस्सा बन गया है। ऑर्गन या हारमोनिका की भाँति हारमोनियम भी एक स्वतंत्र रीड वाद्य है। हारमोनियम में मुख्यतः चार भाग होते हैं— धौंकनी, वायु कक्ष, कुँजियाँ और रीड। हारमोनियम के ऊपर शीर्ष पर एक कीबोर्ड होता है जिसमें लगभग तीन से साढ़े तीन सप्तक कीज़ (keys) होती हैं। वादक एक हाथ से कीबोर्ड बजाते हैं व दूसरे हाथ से धौंकनी की सहायता से हवा भरकर हारमोनियम वादन करते हैं। धौंकनी के निरंतर और बार-बार धौंकने से, भीतर हवा का दबाव ऊपर उठता है और हारमोनियम कीबोर्ड पर लगी सफेद और काली चाबियों को दबाकर उस हवा को छोड़ा जाता है। प्रत्येक की (key) में एक ही रीड होती है। एक की (key) दबाने से कनेक्टिंग रीड के नीचे एक छोटा-सा वेंट (वायु आदि निकलने का मार्ग) खुल जाता है जिसके माध्यम से हवा गुजरती है, इस प्रकार आवश्यक स्वर की उत्पत्ति होती है।



चित्र 8.29— हारमोनियम बजाते हुए कलाकार

1. भरत मुनि ने वाद्यों के वर्गीकरण के बारे में क्या वक्तव्य रखा है?
2. निम्न तालिका में अपने आसपास, टेलीविजन या यू-ट्यूब पर देखे गए वाद्यों को उनके वर्ग के अनुसार लिखें। उन वाद्यों के प्रदेश का भी उल्लेख कर सकते हैं।

तत	सुषिर	अवनद्ध	घन

3. हर एक वाद्यों के दिए गए विवरण के आधार पर रेखाचित्र बनाइए। कक्षा में लगाइए और उसके वैज्ञानिक एवं सामाजिक विज्ञान के संबंधों पर मंथन करिए। परियोजना बनाइए।

## इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा

इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा (इलेक्ट्रॉनिक तंबूरा या इलेक्ट्रॉनिक श्रुति बॉक्स) एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है। यह इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा (तंबूरा) तार वाद्य या तानपुरा की ध्वनि को दोहराता है। इसका उपयोग गायक या गायिका या वाद्य-यंत्र बजाने वाले कलाकार करते हैं। यह एक निरंतर ड्रोन जैसा स्थायी स्वर प्रदान करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। जिस तरह तानपुरे के स्वरों के साथ सुर मिलाकर गाया-बजाया जाता है, उसी तरह इलेक्ट्रॉनिक तानपुरे का भी प्रयोग किया जाता है। इलेक्ट्रॉनिक







चित्र 8.30—इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा

तानपुरे में टोन और वॉल्यूम को नियंत्रित करने के लिए एक या अधिक स्विच या बटन होते हैं। स्विच के द्वारा एक निश्चित स्वर या स्केल और वॉल्यूम स्थापित किया जाता है। इसकी स्वर सीमा आमतौर पर एक से दो सप्तक होती है। स्वर या स्केल को बदलना, तानपुरा के चार तारों की गति में बदलाव लाना और मध्यम एवं पंचम स्वरों को राग के अनुसार बदलने के सभी विकल्प इलेक्ट्रॉनिक तानपुरे में होते हैं। इलेक्ट्रॉनिक तानपुरे का आविष्कार जी. राज नारायण ने सन् 1979 में किया था। पहला संस्करण कैपेसिटर, ट्रांजिस्टर का उपयोग करके, तब की उपलब्ध तकनीक के आधार पर बना था। 1990 के दशक के उत्तरार्ध में, एक चिप पर पारंपरिक तानपुरा की सैंपल रिकॉर्डिंग का उपयोग करके इसके विभिन्न मॉडल तैयार किए गए थे। सन् 2000 के दशक में इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा को भी एन्ड्रॉइड मोबाइल ऐप्लीकेशन में विकसित कर लिया गया, जिसे आज भी हम इस्तेमाल करते हैं। अधिकांश संगीतकारों के लिए इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा एक अत्यंत सुविधाजनक व्यावहारिक यंत्र है।

### श्रुति बॉक्स या सुरपेटी

श्रुति बॉक्स (श्रुति बॉक्स या सुरपेटी) एक इलेक्ट्रॉनिक गैजट है। इसका उपयोग अभ्यास के दौरान या संगीत कार्यक्रमों में एक ड्रोन (एक स्थायी स्वर) प्रदान करने के लिए किया जाता है। श्रुति बॉक्स का उपयोग शास्त्रीय गायन में निरंतर किया जाता है। तमिल और तेलुगू में इसे 'श्रुति पेटी' और हिंदी में 'सुर पेटी' कहते हैं।



चित्र 8.31—श्रुति बॉक्स या सुरपेटी



चित्र 8.32—इलेक्ट्रॉनिक तालमाला

### इलेक्ट्रॉनिक तालमाला

इस उपकरण के आविष्कारक भी जी. राज नारायण हैं। इसमें उत्तरी तथा दक्षिणी, दोनों पद्धतियों के विभिन्न तालों के ठेके विद्यमान होते हैं। इसमें विभिन्न लयों, जैसे— विलंबित, अति विलंबित, मध्य और द्रुत आदि के ठेकों को व्यवस्थित किया जा सकता है। इसका उपयोग किसी संगतकार की अनुपस्थिति में अभ्यास के दौरान करना उचित होगा। यह एक कृत्रिम उपकरण है जो संगतकार का स्थान नहीं ले सकता है।







## ऐप

ऐप का पूरा नाम ऐप्लीकेशन होता है जो एक सॉफ्टवेयर का रूप है। यह एक निर्धारित कार्य प्रणाली के तहत कार्य करता है। संगीत की दृष्टि से, जैसे— गाना सुनने का ऐप, गाना रिकार्ड करने का ऐप, गाने को संगीतमय बनाने का ऐप, यह किसी भी प्रकार का हो सकता है। ऐप को इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस, जैसे— मोबाइल, लैपटॉप आदि में इस्तेमाल किया जाता है। इसमें तानपुरा, नगमा, संगति के लिए ठेके आदि की सुविधा सुरीलेपन के साथ उपलब्ध रहती है।



चित्र 8.33—म्यूज़िकल ऐप्स

## अभ्यास

### बहुविकल्पीय प्रश्न—

- रुद्र वीणा से प्रेरणा लेकर कौन-सा वाद्य यंत्र बना?  
(क) सुरबहार (ख) सरोद (ग) तानपुरा (घ) वॉयलिन
- सितार में मुख्य तारों की संख्या कितनी होती है?  
(क) नौ (ख) पाँच (ग) सात (घ) चार
- गज के घर्षण द्वारा बजाए जाने वाले वाद्य किस श्रेणी में आते हैं?  
(क) सुषिर वाद्य (ख) अवनद्ध वाद्य (ग) तत् वाद्य (घ) घन वाद्य
- मृदा किसे कहते हैं?  
(क) चमड़ा (ख) लकड़ी (ग) धातु (घ) मिट्टी
- निम्न में से किस वाद्य को बो या गज की सहायता से बजाया जाता है?  
(क) तानपुरा (ख) सितार (ग) इसराज (घ) सरोद
- जवा द्वारा बजाया जाने वाला वाद्य-यंत्र कौन-सा है?  
(क) तानपुरा (ख) सरोद (ग) सितार (घ) सारंगी



7. निम्न में से किस वाद्य में परदे नहीं होते हैं?  
(क) इसराज (ख) सरोद (ग) दिलरूबा (घ) सितार
8. चमड़े अथवा खाल से मढ़े हुए खोखले वाद्य-यंत्र किस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं?  
(क) अवनद्ध वाद्य (ख) तत् वाद्य (ग) घन वाद्य (घ) सुषिर वाद्य
9. तानपुरे के दोनों षड्ज के तार किस सप्तक में मिलाए जाते हैं?  
(क) अति मंद्र (ख) मंद्र (ग) तार (घ) मध्य
10. तानपुरे में पंचम स्वर किस सप्तक का होता है?  
(क) तार (ख) मध्य (ग) मंद्र (घ) इनमें से कोई नहीं
11. क्लेरोनेट और नागस्वरम् कौन-सी श्रेणी के वाद्य यंत्र हैं?  
(क) तत् वाद्य (ख) सुषिर वाद्य (ग) अवनद्ध वाद्य (घ) घन वाद्य
12. हवाईयन गिटार को सात्विक वीणा नाम से इनमें से कौन से संगीतज्ञ बजाते हैं?  
(क) नलिन मजूमदार (ख) देबाशीष मुखर्जी  
(ग) सलिल भट्ट (घ) कृष्ण शर्मा
13. इसराज वाद्य में मुख्य तार व सहायक तारों की संख्या कितनी होती है?  
(क) पाँच तथा सोलह (ख) आठ तथा ग्यारह  
(ग) चार तथा पंद्रह (घ) तीन तथा इक्कीस
14. जवा बनाने के लिए किस चीज का प्रयोग होता है?  
(क) प्लास्टिक (ख) लोहा  
(ग) स्टील (घ) नारियल का पक्का टुकड़ा

**आइये, देखते हैं क्या इस पाठ को पढ़कर हम निम्न प्रश्नों के उत्तर दे सकते हैं—**

1. किस श्रेणी के संगीत वाद्यों का प्रयोग शास्त्रीय संगीत की अपेक्षा लोक संगीत में अधिक होता है?
2. सितार या तानपुरे का तुम्बा किस वस्तु से बनता है?
3. तबले की स्याही किस वस्तु से निर्मित होती है?
4. घन वाद्यों को मुख्यतः किस प्रकार बजाया जाता है?
5. अवनद्ध कौन-सी भाषा का शब्द है?
6. संगीत वाद्य से क्या तात्पर्य है?
7. मानव शरीर को किस प्रकार का वाद्य यंत्र माना गया है?
8. संगीत में वाद्यों का क्या महत्व है?







9. तत् वाद्य किसे कहते हैं? उदाहरण सहित बताइए।
10. महाभारत कालीन किन्हीं चार वाद्यों के नाम लिखिए।
11. तानपुरा वाद्य में अधिकांशतः कितने तार होते हैं?
12. विभिन्न काल खंडों में मुख्यतः किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संगीत वाद्यों का प्रयोग होता था?
13. अवनद्ध वाद्यों में लगने वाला चमड़ा किन-किन पशुओं से प्राप्त होता है? किन्हीं तीन के नाम लिखिए।
14. हारमोनियम के मुख्य अंगों के नाम लिखिए।
15. सरोद वाद्य अन्य किस वाद्य के समान माना जाता है?
16. सितार वादन किस वास्तु की सहायता से किया जाता है?
17. स्व. पंडित वी.जी.जोग और एन. राजम किस वाद्य से संबंधित हैं?
18. प्राचीन समय में मुख वीणा के नाम से प्रचलित वाद्य वर्तमान समय में किस नाम से जाना जाता है?
19. रबीन्द्र संगीत में अधिकांशतः किस वाद्य का प्रयोग होता है?
20. पाश्चात्य गिटार के दो प्रकार कौन से हैं ?
21. मोहन वीणा किस वाद्य का अन्य नाम है? किस संगीतज्ञ ने इस नाम को प्रचलित किया?
22. नागालैंड में बाँसुरी को किस नाम से जाना जाता है?
23. संगीत में अवनद्ध वाद्य से क्या तात्पर्य है?
24. प्राचीन काल के किन्हीं चार अवनद्ध वाद्यों के नाम बताइए।
25. तबला अथवा तानपुरे का चित्र बनाकर उस वाद्य यंत्र के अंगों को नामांकित कीजिए।
26. वैदिक काल में शास्त्रीय संगीत व सामान्य जनसाधारण के जीवन में संगीत वाद्यों का क्या महत्व रहा है? इसका उल्लेख कीजिए।
27. तंत्री वाद्य से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित लिखिए।
28. तत् व सुषिर वाद्यों में उदाहरण सहित अंतर बताइए।
29. तत्, सुषिर, घन एवं अवनद्ध वाद्यों की तुलना कीजिए।
30. ढोलक, मृदंगम् एवं तविल वाद्यों की सचित्र तुलना कीजिए।
31. किसी इलेक्ट्रॉनिक वाद्य यंत्र की उपयोगिता के विषय में विस्तार से लिखिए।
32. तानपुरे वाद्य के अंगों को विस्तार से समझाइए।
33. हारमोनियम वाद्य में ध्वनि उत्पत्ति की प्रक्रिया को विस्तार से समझाइए।
34. सरोद वाद्य की बनावट को विस्तार से समझाते हुए किन्हीं दो सरोद वादकों के नाम दीजिए।
35. गिटार वाद्य की उत्पत्ति को संक्षेप में समझाइए तथा भारतीय वाङ्मय में विभिन्न संगीतज्ञों द्वारा इसे किन नामों से जाना जाता है?



### विभाग 'अ' के शब्दों का 'आ' विभाग में दिए गए शब्दों से मिलान करें—

अ	आ
(क) खंजरी	1. भरत मुनि
(ख) अवनद्ध	2. जी. राज नारायण
(ग) खोल	3. चमड़ा
(घ) नाट्यशास्त्र	4. केरल
(ङ) इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा	5. स्थायी स्वर
(च) तविल	6. हारमोनियम
(छ) सुषिर	7. पश्चिम बंगाल
(ज) ड्रोन	8. घन वाद्य

### रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

1. इसराज वाद्य \_\_\_\_\_ श्रेणी का वाद्य है।
2. सुषिर वाद्यों में स्वर की उत्पत्ति \_\_\_\_\_ द्वारा होती है।
3. सुषिर वाद्यों में वायु के दबाव को \_\_\_\_\_ स्वर ऊँचा-नीचा किया जाता है।
4. चार वाद्यों के वर्गीकरण का उल्लेख सर्वप्रथम \_\_\_\_\_ में मिलता है।
5. शरण रानी बाकलीवाल \_\_\_\_\_ वाद्य की उत्कृष्ट कलाकार हैं।
6. आर्गन की भाँति \_\_\_\_\_ भी एक रीड वाद्य है।
7. तानपुरे के पहले तार को \_\_\_\_\_ के \_\_\_\_\_ स्वर में मिलाया जाता है।
8. जावा नामक वस्तु का प्रयोग \_\_\_\_\_ वाद्य में होता है।
9. पंडित देबू चौधरी \_\_\_\_\_ वाद्य से संबंधित हैं।
10. वेणु ए अलगुज ए पावा आदि शब्द \_\_\_\_\_ किस वाद्य के पर्याय हैं।
11. सिक्किल सिस्टर्स \_\_\_\_\_ वाद्य की प्रख्यात कलाकार हैं।
12. सितार का तुम्बा \_\_\_\_\_ लकड़ी से बनाया जाता है।

### परियोजना—

1. संगीत के वाद्यों के चारों वर्गों के चित्रों का संग्रह कर चार्ट पेपर पर चिपकाकर कोलॉज बनाइए। विद्यार्थी डिजिटल चित्र भी बना सकते हैं।
2. तुम्बा युक्त वाद्यों को देखिए तथा उनको बनाइए और विवरण दीजिए।







3. सितार मिजराब से छेड़ी जाती है। उसकी आकृति बनाइए और विचार कीजिए क्या यह किसी गणितीय आकृति को दर्शाती है।
4. अपनी पसंद के संगीत वाद्य पर परियोजना निम्नलिखित बिंदुओं के अनुसार बनाइए—
  - \* वह वाद्य किन वस्तुओं से बना है?
  - \* उसकी बनावट का तरीका क्या है?
  - \* वाद्य के विभिन्न अंगों को नामांकित कीजिए।
  - \* वाद्य से संबंधित कुछ प्रसिद्ध कलाकारों के नाम लिखिए। उन्हें कौन-से पुरस्कार प्राप्त हुए हैं?
  - \* आज के समय में इस वाद्य का प्रयोग किस प्रकार हो रहा है?
  - \* किसी भी अवनद्ध वाद्य को त्रिआयामी आकार में बनाकर उसका नामांकन कीजिए।

### शिक्षकों हेतु गतिविधि—

1. बच्चों की पसंद के गीतों पर उनसे संगीत वाद्यों को बजवाएँ, जैसे— कौंगो, बौंगों, तबला, हारमोनियम, गिटार, पत्ते से बनी सीटी, पत्थरों द्वारा बजाई गई लय/गति आदि।
2. बच्चों को उनकी पसंद के गीत सुनवाकर, गीत के साथ प्रयुक्त होने वाले संगीत वाद्य-यंत्रों की भिन्न-भिन्न ध्वनियों को पहचानने हेतु प्रेरित करें। (साउंड क्लिप्स के द्वारा)
3. प्रकृति में पाई गई वस्तुओं से निर्मित वाद्यों से कक्षा में आरकेस्ट्रा बजवाना, जैसे— पत्ते, टूटे हुए तने, टहनी, पड़े हुए टीन के डिब्बे, काँच की बोतल इत्यादि।
4. कल्पना कीजिए एवं रेखाचित्र बनाइए— रसोईघर के किन बर्तनों जैसा वाद्य यंत्र आपने देखा है।



© NCERT  
not to be republished



## घ ताल-अध्ययन

### 9. विभिन्न तालों के ठेके एवं लयकारी



© NCERT  
not to be republished